दलहन उत्पादन में बाधायें एवं उनका निवारण

कमल तिवारी [1], संजीव कुमार [2], शैलेन्द्र सिंह [3], राम निवास [4], एवं किशन कुमार [5]

[1,3,4,5]शोध छात्र, [2]प्राध्यापक, सस्य वैहिकी विभाग, चन्द्र शेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कानपुर–२०८००२

Email-k.tiwari27795@gmail.com

भारत में अधिकांश आबादी शाकाहारी है और उनके लिए प्रोटीन का मुख्य स्त्रोत दालें हैं अतः दालें भारतीय भोजन में महत्वपूर्ण स्थान रखती है। दालों में प्रोटीन की मात्रा धान्यों से अधिक होती है और उचित अनुपात में दालों व धान्यों के मिश्रण से अच्छा भोजन प्राप्त किया जा सकता है। भारत की कृषि प्रणाली में भी दालों की महत्वपूर्ण भूमिका है। दालों को चारे तथा हरी खाद के लिए भी उगाते है। दलहनी फसलों की जड़ों में गाँठे होती है जिनमें राइजोबियम जीवाणु रहते है और वायुमण्डलीय नाइट्रोजन का भी स्थिरीकरण करते है। इस प्रकार दालों की खेती से कीमती कृषि निवेशों जैसे– नाइट्रोजन वाली खादे एवं पानी की बचत होती है। देश की खेती योग्य कुल भूमि के लगभग 20 प्रतिशत भाग पर दलहनी फसलों की खेती की जाती है। भारत में दलहनों का कुल उत्पादन 23.40 मिलियन टन, क्षेत्रफल 29.03 मिलियन हेक्टेयर एवं उत्पादकता 806 किग्रा0 प्रति हेक्टेयर है और उत्तर प्रदेश में दलहनों का कुल उत्पादन 2.40 मिलियन टन, क्षेत्रफल 2.30 मिलियन हेक्टयर एवं उत्पादकता 1044 किग्रा प्रति हेक्टेयर (एग्रीकल्चर स्टेटिस्टिक्स एट ए ग्लान्स –2019), भारत में प्रति व्यक्ति प्रतिदिन लगभग 48 ग्राम दाल उपलब्ध है जो कि सिफारिश की गयी मात्राा 80 ग्राम से कम है।

दलहन उत्पादन में बाधायें–

भारत में दालों की खेती अधिकांशता परम्परागत सूखे क्षेत्रों में होती हैं जिससे सिंचित क्षेत्रों की बढ़ाने की जरूरत है, तभी पूर्ण लाभ मिल सकेगा। कुल मिलाकर दलहन उत्पादन में अनेक बाधायें हैं, जिन्हें निम्न भागों में विभक्त किया जा सकता है।

(1) कृषि– जलवायवीय बाधायें–

लगभग 92: या इससे अधिक दलहनों की उपज वर्षाधीन/सूखे क्षेत्रों से मिलती है। अनिश्चित एवं अपर्याप्त वर्षा भी समय से बुवाई में बाधक है। जिसके कारण पौधों की उचित संख्या प्राप्त नही हो पाती, फलतः उपज घट जाती है, चाहे उन्नत किस्में ही क्यों न हो। सामान्यतः वर्षाधीन क्षेत्रों की सीमान्त भूमियाँ उर्वरता में कमजोर होती है साथ ही इनमें नमी रोकने की क्षमता कम होती है। फलस्वरूप दलहनी फसलें अपने जीवन–चक्र को पूरा करने में हमेशा नमी एवं उर्वरक की कमी महसूस करती रहती हैं, अतः कम एवं अस्थिर उपज मिलती है।

(2) जैविक बाधायें–

जब से खेती आरम्भ हुई, तभी से दलहनों को अछूत रखा गया है। यह सच है कि विषम परिस्थितियों में हमेशा दलहन को बचाने के प्रयास होते रहे है क्योंकि दलहनी फसलों का शुरूआती

लक्षण रहा है कि अनिश्चित वृद्धि, अधिक फूल आना एवं लम्बे समय तक उनका आना, गहरा जड़ तन्त्र, संयुक्त पत्तियाँ, फूलों का बहुतायत में झड़ना एवं फलियों का चटकना आदि। ये सभी पैत्रिक बाधायें हैं जो निश्चय ही उत्पादकता की कमजोर कड़ियाँ है।

धान्य एवं अन्य फसलों की तुलना में दलहनी फसलों में अधिकांश संख्या में बीमारी एवं कीट लगते हैं, जो फसलों को चट कर जाते है जिससे दलहन फसलों की उपज गिर जाती है। भंडारण में भी अनेक कीट भारी नुकसान पहुँचाते हैं, अतः कृषक मजबूर होकर फसल कटाई के बाद अनाज को बाजार में कम दाम पर ही बेच देता है। ये सभी कारण कृषक को बड़े पैमाने पर दलहन की खेती न करने को मजबूर कर देते है।

(3) प्रबन्धीय बाधायें– इसमें बीज उत्पादन, कमजोर तकनीकी हस्तान्तरण, अनुसंधान आदि आते है।

1. **बीज उत्पादन** – उन्नत बीजों का हमेशा अभाव ही कमजोर दलहन उत्पादन का कारण है क्योंकि किसान अपने ही बीजों को बोता रहता है जिससे उपज कम मिलती है। बीज पुराने होने के कारण फसल में रोग व कीटों का प्रकोप अधिक होता है।
2. **अनुसंधान** – विश्व में भारत प्रमुख दलहन उत्पादक देश है, फिर भी दलहन में अनुसंधान बहुत कम हुआ अपेक्षाकृत गेहूँ व धान के।
3. **प्रसार** – वास्तव में हस्तान्तरण एजेन्सी मात्र गेहूँ, मक्का, बाजरा, धान में ही कार्यरत है न कि दलहन फसल प्रोग्राम में। प्रसार की कमी होने के कारण किसानों तक दलहन फसल से सम्बन्धित जानकारी समय से नही पहुँचती है।
4. **फसल सुरक्षा** – दलहनो में कीटो एवं बीमारियों से अधिक हानि होती है। अभी तक कृषकों को सही जानकारी का अभाव होना कि कौन बीमारी/कीट के लिए कौन सा रसायन या कौन सी विधि नियंत्रण के लिए सही रहेगी। जब तक किसान को कीट व बीमारी के नियंत्रण का पता चलता है तब तक कीट फसल को चट कर देता है।
5. **जैव उर्वरक** – किसानों को जैव उर्वरक के बारे में कम ही जानकारी होना कि जैव उर्वरक क्या है और दलहनी फसलों में कैसे और कौन सा जैव उर्वरक प्रयोग करना चाहिए।

दलहन उत्पादन बढ़ाने के लिए सुझाव –

यह सत्य है कि दलहनों की उत्पादकता कम नही है। कम उत्पादन के बारे में सोचना निश्चय हमारी ही कमजोरी होगी। यदि निम्न सुझावित तकनीकी अपनाई जाये तो निःसंदेह दलहनों से अधिक लाभ एवं उत्पादन लिया जा सकता है।

(1) भूमि का चुनाव – सफल फसल उत्पादन के लिए भूमि का चुनाव अत्यधिक महत्वपूर्ण है, दलहनों को बंजर, ऊँची–नीची, जल भराऊ, छोड़ी गई भूमि में न उगाकर उपजाऊ एवं सिंचित दशाओं में भूमि की तैयारी अच्छी तरह से करके करनी चाहिए, जिससे वायु संचार अच्छा रहे, जो अंकुरण और पौधे की वृद्धि में सहायक होता है।

(2) किस्मों का चुनाव – किस्मों का चुनाव हमेशा अपने क्षेत्र की जलवायु/एग्रो–ईको जोन्स के अनुसार करना चाहिए क्योंकि उस क्षेत्र की समस्याओं को देखते हुये कृषि विश्वविद्यालय या भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली द्वारा नई किस्मों का विकास किया जाता है। किसानों को हमेशा नई उन्नतशील किस्मों के बीजों का चुनाव करना चाहिए।

(3) बीजोपचार एवं बीजदर – दलहनी फसलों के लिए उन्नत बीजों की उचित मात्रा का प्रयोग करना चाहिए क्योंकि प्रति इकाई क्षेत्रफल में पौधों की संख्या कम होगी तो पैदावार अपने आप

कम हो जाती है। फसल के बीजों का उपचार करने से फसल में लगने वाले रोग व कीट कम या लगते ही नहीं, बीज का उपचार सर्वप्रथम फँफूदी नाशक और बाद में कीटनाशक और इसके उपरान्त राइजोबियम कल्चर से उपचारित करके बीज को छाया में सुखा लेना चाहिए और बीज की बुवाई हमेशा शाम के समय करनी चाहिए। राइजोबियम दलहनी पौधों की जड़ों में प्रवेश करके छोटी–छोटी गुलाबी रंग की ग्रन्थियों का निर्माण करके उनके अन्दर रहते है और यह गुलाबी रंग लेग–हीमोग्लोबिन के कारण होता है। ये जीवाणु वायुमण्डलीय नाइट्रोजन को सोखकर योगिकीकरण क्रिया द्वारा जड़ों में जमा करते है। जिसके कारण दलहन फसलों को कम नत्रजन की मात्रा देनी पड़ती है।

(4) बुवाई की विधि एंव समय – फसलों की बुवाई हमेशा समय पर और पंक्तियों में संस्तुत दूरी पर करना चाहिए, समय पर बुवाई न करने पर पौधे की वृद्धि एवं विकास कम होता है और पंक्तियों में बुवाई करने से फसल में खरपतवार प्रबन्धन करना आसान रहता है और पौधे को वृद्धि के लिए पर्याप्त जगह मिल जाती हे। जिससे पौधे में फूल–फल अच्छे आते है।

(5) उर्वरक प्रयोग – प्रायः यह देखा जा रहा है कि कृषक उर्वरकों के द्वारा दिये जाने वाले पोषक तत्वों का फसलों में असंतुलित मात्रा में प्रयोग कर रहे है। जब कि दलहनी फसलों में नत्रजन, फास्फोरस, पोटाश का अनुपात सन्तुलित रूप 1:2:1 में करना चाहिए और उर्वरकों का प्रयोग कूड़ो में बीज से 4–5 सेमी नीचे करना चाहिए तभी फसल की वांछित उपज प्राप्त होगी।

(6) खरपतवार नियंत्रण – साधारणतया दलहनी फसलों में खरपतवारों की समस्या अधिक रहती है विशेष रूप से पौधे की प्रारम्भिक अवस्था में जब पोधे छोटे होते हैं। खरपतवार मुख्य फसल के साथ नमी, पोषक तत्व, स्थान धूप आदि के लिए प्रतिस्पर्धा करते है, जिसके कारण फसल की पैदावार पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। खुरपी द्वारा खरपतवार नियंत्रण करने में अधिक समय के साथ अधिक खर्च आता है, अतः उपयुक्त खरपतवारनाशी बेसालिन 45 ई॰ सी॰ 1 ली0/हेक्टेयर की मात्रा का प्रयोग बुवाई से पहले या पेंडीमेथालिन 30 ई॰ सी॰ 1.0– 1.5 ली0/हेक्टेयर बुवाई के बाद अंकुरण से पहले प्रयोग करने से खरपतवार नियंत्रण करना आसान रहता है, और खरपतवार कम संख्या में उगते हैं।

कीट एवं रोग नियंत्रण – दलहनी फसलों में आशातीत वृद्धि न होने का एक प्रमुख कारण कीट एवं बीमारियों का प्रकोप है। चने व अरहर में फली भेदक, का नियंत्रण क्यूनॉलफॉस 25 ई॰ सी॰ की 1.25 लीटर मात्रा को 800 लीटर पानी में घोलकर 1 हेक्टेयर में प्रयोग कर सकते हैं। मटर में पाउडरी मिल्ड्यू, मूँग/उर्द में पीला मौजेक विषाणु तथा अरहर, चना में उकठा रोग का उचित एवं समय पर नियंत्रण करके सफल उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है।

सिंचाई– दलहन फसलों में 2–3 सिंचाई की आवश्यकता होती है। जिसमें से प्रमुख पहली सिंचाई फूल आने के पहले और दूसरी सिंचाई दाना भरते समय करना अति आवश्यक होता है। फसल में फूल आते समय सिंचाई नही करना चाहिए क्यों कि इस अवस्था में सिंचाई करने से फूल झड़ जाते है जिससे पैदावार घट जाती है।

फसल कटाई – फसल का सफल उत्पादन लेने के लिए समय पर फसल की कटाई भी महत्वपूर्ण होती है क्योंकि दलहनी फसलों में फलियों के चटकने की बहुत बड़ी समस्या होती है। इसीलिए फसल की कटाई फिजीओलोजिकल परिपक्ता पर कर लेना चाहिए। इस अवस्था में फसल के दाने में नमी लगभग 15 प्रतिशत होती है और पौधे सूखे दिखाई पड़ते है।